नये क्षितिज के स्पर्श की सर्जनात्मक पहल

निरंजन सहाय

इस बार राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, दिल्ली द्वारा ग्यारहवीं और बारहवीं कक्षा के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के विद्यार्थियों को सर्जनात्मक लेखन एवं लेखन की विभिन्न विधाओं से परिचित कराने के लिए प्रकाशित पाठ्यपुस्तक 'अभिव्यक्ति और माध्यम' की समीक्षा दी जा रही है।

प्रायः भारतीय समाज एक बद्धमूल धारणा के प्रति अपना विश्वास प्रकट करता है, वह यह कि प्रतिभाशाली व्यक्तित्व पैदाइशी होते हैं, जिन्हें उपयुक्त अवसर आते ही सामाजिक स्वीकृति मिलती है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) की सद्यः प्रकाशित हिन्दी पाठ्यपुस्तक 'अभिव्यक्ति और माध्यम' इस धारणा का खंडन करती है। ग्यारहवीं और बारहवीं के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए यह पाठ्यपुस्तक प्रस्तुत की गई है। पाठ्यक्रम पहली बार मौजूदा सत्र में ही प्रस्तावित किया गया है। पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के सदस्यों के रूप में पारंपरिक अध्यापन व शैक्षिक विमर्श से जुड़े लोगों की बजाए उन अधिकारिक विद्वानों को शामिल किया गया है जो जनसंचार और सर्जनात्मक लेखन की दुनिया से व्यावहारिक रूप से संबद्ध हैं। पुस्तक की केन्द्रीय स्थापना है, प्रशिक्षण और सतत प्रयास से प्रतिभा अर्जित की जा सकती है। साथ ही लेखन की बारीकियों से न सिर्फ रू-ब-रू हुआ जा सकता है, बल्कि बेहतर लेखन में माहिर भी हुआ जा सकता है। पुस्तक तीन संदर्भों को विश्लेषित करती है - जनसंचार माध्यम और लेखन, सृजनात्मक लेखन एवं व्यावहारिक लेखन।

हिन्दी में इन विषयों पर उपलब्ध पुस्तकें बेहद यांत्रिक एवं उबाऊ हैं। यह किताब सर्जनात्मक लेखन एवं प्रस्तुति की दृष्टि से मील का पत्थर है। पुस्तक राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा : 2005 की इस धारणा को बहुत सुंदर एवं प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करती है कि 'बच्चे के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ा जाना चाहिए। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत के विपरीत है जिसके प्रभाववश हमारी व्यवस्था आज तक स्कूल और घर के बीच अंतराल बनाए हुए है। नई राष्ट्रीय पाठ्यचर्या पर आधारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इस बुनियादी विचार पर अमल करने का प्रयास हैं। इस प्रयास में हर विषय को एक मजबूत दीवार से घेर देने और जानकारी को रटा देने की प्रवृत्ति का विरोध शामिल है।' कहना न होगा पुस्तक रचना की प्रक्रिया में पठनीयता और बदलते समय के यथार्थ से बावस्ता रहने का खास ध्यान रखा गया है।

पुस्तक आश्चर्यजनक रूप से रंगभेद, नस्लभेद, जातिगत एवं धार्मिक पूर्वाग्रहों पर कलात्मक ढंग से अपना रुख स्पष्ट करती है। इस अर्थ में मानवाधिकारों तथा लोकतांत्रिक मूल्यों को भी यह पुस्तक अपनी चिन्ता में शामिल करती है। इस

लेखक परिचय :

हिन्दी साहित्य में पी.एच.डी., युवा आलोचक; शिक्षा, संस्कृति और साहित्य पर निरंतर लेखन, एन.सी.ई.आर.टी. की पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के सदस्य। विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित। संप्रति-पंडित उदय जैन महाविद्यालय, कानोड, उदयपुर में हिन्दी साहित्य के प्राध्यापक।

सम्पर्क :

इन्द्रप्रस्थ कॉलोनी, नीमच रोड, कानोड़, जिला-उदयपुर, राजस्थान
पिन 313604

अध्ययन में कुछ ऐसे बेहद महत्त्वपूर्ण प्रसंगों की चर्चा की जाएगी। पर इस पुस्तक की कुछ सीमाएं भी हैं, जिनकी चर्चा भी जरूरी है। कहना न होगा ऐसे स्थल या प्रसंग न के बराबर हैं। पर यह उम्मीद की जा सकती है कि अगले संस्करणों में इन पक्षों पर भी संवेदनशील और विद्वान समिति सदस्य विचार करेंगे। इन दोनों पक्षों पर अध्ययन के अंतिम हिस्से में विचार किया जाएगा।

विषयक्रम तीन इकाइयों में विभक्त है। इकाई एक 'जनसंचार माध्यम और लेखन' पर केन्द्रित है, जबकि इकाई दो और तीन क्रमशः 'सृजनात्मक लेखन' और 'व्यावहारिक लेखन' पर आधारित है। इकाई एक पांच अध्यायों में विभक्त है। पहले दो अध्याय कक्षा ग्यारह के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए निर्धारित हैं, जबकि बाद के तीन अध्याय कक्षा बारह के आधार और ऐच्छिक पाठ्यक्रम के लिए। पहले अध्याय का शीर्षक है 'जनसंचार माध्यम'। अध्याय की शुरूआत में प्रभाष जोशी का उद्धरण है, जो केवल पत्रकारिता ही नहीं, पुस्तक की प्रतिबद्धता को भी प्रकट करता है। उद्धरण इस तरह है, 'मीडिया जब तक जनता को साथ लेकर नहीं चलेगी, तब तक जनता भी उसका साथ नहीं देगी।' ध्यान देने लायक बात है कि उद्धरण के केन्द्र में वृहत्तर जनसमुदाय धुरी के रूप में उपस्थित है। पुस्तक में अनेक स्थानों पर उस जनसमुदाय के प्रति पक्षधरता अभिव्यक्त हुई है, जिसे मौजूदा समय हाशिए पर धकेलने की तमाम युक्तियों को मूर्त रूप प्रदान करने में खतरनाक हद तक सक्रिय है। बाजार, विश्वग्राम, उपभोक्तावाद, सूचना-संजाल जैसी अवधारणाएं जितनी सकारात्मक हैं, उतनी ही नकारात्मक भी। किशोर से युवा होते विद्यार्थियों के विवेक को समृद्ध करने वाली यह पाठ्यपुस्तक एक नागरिक के रूप में सकारात्मक भूमिका निर्धारित करने की समझ विकसित करती है। पहले अध्याय में संचार, संचार के तत्त्व, प्रकार, विशेषताएं, कार्य, जनसंचार माध्यमों का विकास, जनसंचार माध्यमों का प्रभाव इन सभी मुद्दों का बेहद प्रभावी और तर्कपूर्ण विश्लेषण किया गया है। अध्याय का सबसे खूबसूरत पक्ष यह है कि मुख्यधारा की मीडिया की चमक-दमक के कानफोड़ शोर के बीच जनसंचार की वास्तविकताओं और प्रतिरोधी चेतना के मुकम्मल नेपथ्य और मौजूदा दौर को खास तौर पर रेखांकित किया गया है। जैसे अध्याय बताता है - 'जनसंचार सूचना, शिक्षा और मनोरंजन के अलावा एजेंडा तय करने का काम भी करता है।... जनसंचार माध्यमों का लोगों पर नकारात्मक प्रभाव भी पड़ता है। इन नकारात्मक प्रभावों के प्रति लोगों का सचेत होना बहुत जरूरी है। मुख्यधारा की फिल्मों और उनसे असहमत प्रतिरोधी स्वरों पर पुस्तक अपने बेबाक स्वरों को इस तरह रखती है - 'सत्तर के दशक तक सिनेमा के मूल में प्रेम, फंतासी और एक कभी न हारने वाले सुपर नेचुरल हीरो की परिकल्पना रही। कहानियों में कुछ-न-कुछ संदेश देने की भी कोशिश हुई लेकिन बहुत ही अव्यावहारिक तरीके से। सत्तर और अस्सी के दशक में कुछ फिल्मकारों ने महसूस किया कि सिनेमा जैसे सशक्त संचार माध्यम का इस्तेमाल आम लोगों में चेतना फैलाने, उसे व्यावहारिक जीवन की समस्याओं से जोड़ने और अन्याय के खिलाफ एक कलात्मक अभिव्यक्ति के तौर पर किया जाए। यही समानांतर सिनेमा का दौर था और इस दौरान 'अंकुर' 'निशांत', 'अर्द्धसत्य' जैसी फिल्में बनीं।' बाद के दौर की फिल्मों पर पुस्तक की जो टिप्पणी है वह मौजूदा दौर की फिल्मों पर भी सटीक है, 'अस्सी और नब्बे के दशक में मुंबइया सिनेमा पर व्यावसायिकता का नशा इस कदर छाता गया कि फार्मूला फिल्में फिल्मकारों के लिए मुनाफा कमाने का सबसे बड़ा हथियार बन गई। ऐसी फिल्मों के केन्द्र में रोमांस, हिंसा, सेक्स और एक्शन को रखा जाता रहा है। कहने के लिए हर फिल्म में कोई न कोई सामाजिक संदेश देने की औपचारिकता निभाई जाती है लेकिन इनका मकसद महज पैसा कमाना है।'

जब पुस्तक समकालीन टेलीविजन के विभिन्न खबरिया चैनलों पर यह टिप्पणी करती है कि, 'पिछले एक-डेढ़ दशक में भारत में कई ऐसे मौके आए जब जनसंचार माध्यमों ने उन मुद्दों को खूब हवा दी जो कहीं न कहीं बहुसंख्यक या समाज के ताकतवर वर्गों के हितों से जुड़े हुए थे', तब बिना कहे वह विद्यार्थियों में उन अनेक घटनाओं पर समझ भी प्रस्तावित करती है, जो पिछले कुछ वर्षों में अनावश्यक ढंग से मीडिया की सुर्खियां बनी। उदाहरण के लिए अभिषेक बच्चन के विवाह प्रसंग को देखा जा सकता है। गुजरात में मोदी सरकार द्वारा किए गए नरसंहार प्रसंगों में सांप्रदायिक ताकतों के समक्ष एक हद तक अधिकांश मीडिया चैनलों की बेबसी। मीडिया की ताकत और उसकी प्रतिरोधी चेतना को पुस्तक इस तरह रेखांकित करती है, 'हाल के वर्षों में स्टिंग ऑपरेशन के जरिए सामने आया 'तहलका कांड' हो या 'ऑपरेशन दुर्योधन' या 'चक्रव्यूह', सबने यही साबित किया है कि यदि चाहे तो जन संचार माध्यम सत्ता के शिखर को भी हिला सकते हैं।' मौजूदा शैक्षिक विमर्श, समय से न सिर्फ गहन और जागरूक रिश्ते के लिए सचेत है, बल्कि वह किशोर मनोविज्ञान से भी आत्मीय संवाद चाहता है। पुस्तक में जगह-जगह बॉक्स बनाकर रोचक जानकारी के साथ-साथ गतिविधियों का जिक्र भी किया गया है। जैसे - पहले अध्याय में 'गतिविधि' के अंतर्गत दिए गए निर्देश को देखा जा सकता है। बॉक्स में निर्देश है - 'आपकी पसंदीदा फिल्म कौन-सी है ? इस फिल्म का कौन-सा-चरित्र आपको अच्छा लगा और क्यों ? फिल्म क्या संदेश देती है ? इस बारे में 200 शब्दों की रिपोर्ट लिखें और अपने अध्यापक को दिखाएं।'

इकाई एक का दूसरा अध्याय है, 'पत्रकारिता के विविध आयाम'। इस अध्याय में पत्रकारिता, समाचार, समाचार के तत्त्व, संपादन, पत्रकारिता के अन्य आयाम, (संपादकीय, फोटो पत्रकारिता, कार्टून कोना, रेखांकन और कोर्टोग्राफी), पत्रकारिता के प्रमुख प्रकार (खोजपरक पत्रकारिता, विशेषीकृत पत्रकारिता, वॉचडॉग पत्रकारिता, एडवोकेसी पत्रकारिता, वैकल्पिक पत्रकारिता), समाचार माध्यमों में मौजूदा रुझान इन तमाम प्रसंगों का संदर्भानुकूल विवेचन किया गया है। अध्याय अनेक सरलीकृत निष्कर्षों की अवधारणा पर पुनर्विचार प्रस्तावित करता है। मसलन - 'हर सूचना समाचार नहीं होता' या 'निष्पक्षता का अर्थ तटस्थता नहीं है। इसलिए पत्रकारिता सही और गलत, अन्याय और न्याय जैसे मसलों के बीच तटस्थ नहीं हो सकती, बल्कि वह निष्पक्ष होते हुए भी सही और न्याय के साथ होती है।' बॉक्स बनाकर पत्रकारिता की दुनिया से जुड़े कई विचारोत्तेजक और चिन्तनपरक मुद्दों पर विमर्श प्रस्तुत किया गया है। जैसे - 'पत्रकारिता के मूल्य' या 'तथ्य बनाम सत्य'। एक लोकप्रचलित कहानी 'अंधों का हाथी' के माध्यम से अध्याय खूबसूरती से यह बयान करता है कि कैसे 'सत्य' की धारणा 'तथ्य' में नहीं बल्कि व्यक्ति के निजी अवबोध में निहित है। अध्याय वैज्ञानिक चेतना के प्रति विशेष रूप से जागरूक है।

तीसरे अध्याय का शीर्षक है, 'विभिन्न माध्यमों के लिए लेखन'। जनसंचार माध्यमों यानी प्रिंट, रेडियो और टेलीविजन की भाषा के बारे में इस अध्याय में बारीकी से विचार किया गया है। खबर लिखने की कला शुष्क तथ्यपरकता का निर्वाह नहीं है, बल्कि वह एक रचनात्मक शीर्ष का स्पर्श है। पाठ के आरंभ में रघुवीर सहाय के एक बहुत सुंदर वक्तव्य के माध्यम से इसे बखूबी स्पष्ट किया गया है। 'पत्रकारीय लेखन के विभिन्न रूप और लेखन प्रक्रिया' पाठ में पत्रकारीय लेखन, समाचार लेखन, फीचर, विशेष रिपोर्ट, विचारपरक लेखन, संपादकीय, स्तंभ, साक्षात्कार आदि की विशेषताओं, पद्धतियों और तकनीकों से अवगत कराया गया है। अच्छे लेखन के संदर्भ में आमतौर पर कुछ रूढ़ियां काफी प्रचलित हैं, मसलन-भाषा आलंकारिक होनी चाहिए, संस्कृतनिष्ठ होनी चाहिए आदि-आदि। यह पाठ अच्छे लेखन के सिलसिले में आठ महत्त्वपूर्ण निर्देशों की चर्चा करता है, कहना न होगा ये निर्देश रूढ़ियों को भी ध्वस्त करते हैं। उनमें से कुछ इस तरह हैं : छोटे वाक्य लिखें। जटिल वाक्य की तुलना में सरल वाक्य संरचना को वरीयता दें। आम बोलचाल की भाषा और शब्दों का इस्तेमाल करें। गैर-जरूरी शब्दों के इस्तेमाल से बचें। अच्छा लिखने के लिए अच्छा पढ़ना भी बहुत जरूरी है। जाने-माने लेखकों की रचनाएं ध्यान से पढ़िए। लिखते हुए यह ध्यान रखिए कि आपका उद्देश्य अपनी भावनाओं, विचारों और तथ्यों को व्यक्त करना है न कि दूसरे को प्रभावित करना।

इस पाठ की शुरूआत में गांधी का एक उद्धरण है, 'निरंकुश कलम समाज के विनाश का कारण बन सकती है। लेकिन अंकुश भीतर का होना चाहिए, बाहर का अंकुश तो और भी जहरीला होगा।' सत्ता सदैव बाहर के अंकुश की तरफदारी करती है। जबकि लेखक अधिकाधिक स्वाधीनता की चाहत रखता है। पर अनेक बार वह निरंकुश हो वर्गीय हितों के आलोक में मेहनतकश अवाम की मुखालफत करने लगता है। ऐसे में गांधी का यह उद्धरण अंश जनसंचार माध्यमों से जुड़े रचनाकारों के आदर्श की नजीर पेश करता है। खंड का अंतिम अध्याय है - 'विशेष लेखन - स्वरूप और प्रकार'। प्रस्तुत पाठ में 'विशेष लेखन', 'विशेष लेखन की भाषा और शैली', 'विशेष लेखन के क्षेत्र' और विशेषज्ञता हासिल करने की बुनियादी बातों के विश्लेषण की कोशिश की गई है। विशेषज्ञता सतत प्रयास के बाद ही हासिल होती है। खेल और कारोबार से जुड़े मुद्दे पर विशेष लेखन के द्वारा आदर्श प्रारूप भी बतौर मिसाल पेश किया गया है। पाठ की सफलता का एक प्रमुख नियामक अभ्यास होता है। अभ्यास में आलेख लिखने के लिए निर्देश दिए गए हैं, विषय के शीर्षक इस तरह दिए गए हैं, जो अंततः लेखक/लेखिका को विशेष जानकारी और शैली अर्जित करने के लिए प्रेरित करते हैं। मसलन 'सानिया मिर्जा के खेल के तकनीकी पहलू', 'शिक्षा को मौलिक अधिकार बनाए जाने के परिणाम', 'सर्राफे में आई तेजी', 'फिल्मों में हिंसा', 'कटते जंगल' इत्यादि।

पुस्तक की दूसरी इकाई 'सृजनात्मक लेखन' पर केन्द्रित है। इस इकाई का पहला अध्याय कविता के लेखन से संबंधित है। शीर्षक है 'कैसे बनती है कविता'। शीर्षक कौतूहल जगाने में समर्थ है। दरअसल शीर्षक अपने आप में एक बेहतर सृजनात्मक लेखन का ही परिणाम है। जरा कल्पना कीजिए यदि इस पाठ का शीर्षक होता 'कविता निर्माण की प्रक्रिया' या फिर 'कविता की संरचना', तब पाठ निर्देश तो देता पर संवाद नहीं करता। कविता की आधारभूत विशेषताओं, जैसे छंद, लय, चित्र, भाषा, छंदमुक्त कविता आदि विशेषताओं को बताने के बाद पाठ उस नवीन दृष्टि को कविता की केन्द्रीय चेतना मानता है, जो प्रकृति प्रदत्त होती है और सब में होती है तथा जिसे निरंतर अभ्यास और परिश्रम से विकसित किया जाता है। 'नाटक लिखने का व्याकरण' पाठ नाटक कैसे अन्य साहित्यिक विधाओं से अलग है, इसका खुलासा करता है। पाठ सोच के नए धरातलों के प्रति इस कदर उत्सुकता और खुलेपन का पक्षधर है कि किशोर मन को अपनी समझ के वितान को दूर तक ले जाने में सहूलियत हासिल होती है। जैसे नाटक में अलिखित का सवाल, अस्वीकार की स्वाभाविक प्रवृत्ति और भाषा की सहजता एवं स्वाभाविकता के सवाल का संबंध आदि संदर्भों में पुस्तक का

विश्लेषण बेहद गौरतलब है। 'कैसे लिखें कहानी' अध्याय में 'कहानी क्या है', 'कहानी की पुरातनता' एवं कहानी के तत्त्वों की विवेचना की गई है। दुनियावी व्यस्तताओं और समय के दवाबों के कारण निज से संवाद का मौका नहीं के बराबर मिलता है। ऐसे में खुद के भीतर उतर कर अपनी मुकम्मल नजर से वाबस्ता होना एक विलक्षण अनुभव है। 'डायरी लिखने की कला' पाठ डायरी लेखन में केवल निजी निगाहों की सीमित दुनिया से परिचित होने की वकालत ही नहीं करता बल्कि वह एक ऐसे डायरी लेखन के लिए प्रोत्साहित करता है, जिसमें समकालीन इतिहास की आवाजें भी मौजूद हों। पाठ का सुन्दर पक्ष है एनी फ्रैंक पर लिखा गया बॉक्स। ऐनी फ्रैंक (1929-1945) जर्मनी में पैदा हुई एक यहूदी लड़की थी। उसने 1942-44 के दरम्यान नाजी अत्याचार के बीच एम्स्टर्डम में छुपकर रहते हुए डायरी लिखी थी। यह बाद में पुस्तकाकार रूप में छपी, जो पिछली सदी की सबसे ज्यादा पढ़ी जाने वाली पुस्तक में एक थी। अन्य अध्यायों में कहानी के नाट्य रूपान्तरण, रेडियो नाटक की निर्माण-प्रक्रिया, नए और अप्रत्याशित विषयों पर लेखन संबंधी बारीकियों का विश्लेषण रोचक और प्रभावी ढंग से किया गया है।

पुस्तक की तीसरी इकाई है - 'व्यावहारिक लेखन'। इस इकाई में 'कार्यालयी लेखन और प्रक्रिया', 'स्ववृत्त लेखन और रोजगार संबंधी आवेदन पत्र' तथा 'शब्दकोष, संदर्भ ग्रन्थों की उपयोगी विधि और परिचय' संबंधी कौशलों की विस्तृत जानकारी दी गई है। इसके लिए विभिन्न प्रारूपों को बतौर उदाहरण पेश किया गया है। कहना न होगा इन व्यावहारिक जानकारियों के बगैर जीवन के अनेक संदर्भ मुश्किल और निरर्थक हो जाते हैं।

किसी पाठ्यपुस्तक की सफलता का सबसे महत्त्वपूर्ण संदर्भ होता है कि उसका समय से क्या रिश्ता है या यूं कहें कि वह समय से कैसे संवाद कायम करती है। यह काबिले तारीफ है कि यह पाठ्यपुस्तक रंगभेद, नस्लभेद, धार्मिक पूर्वाग्रह, जातिवादी, मानवाधिकार आदि प्रसंगों में समझदारी विकसित करने के प्रति खासतौर पर सक्रिय है। कतिपय उदाहरण देखे जा सकते हैं :

लुप्तप्राय होती, जनजाति 'बिरहोरों' पर पी. साईंनाथ के विशेष रिपोर्ट के अंश -

जहां तक सरकारी कार्यक्रमों की बात है, इनमें से ज्यादातर बेकार ही साबित हुए हैं। इसे आप यह भी कह सकते हैं कि सरकारी कार्यक्रमों को भ्रष्ट तंत्र ले उड़ता है। आवास योजनाएं विनाशकारी साबित हुई क्योंकि जिन वास्तुकारों ने इनके लिए मकानों की योजनाएं तैयार की थी, उन्होंने कभी बिरहोर लोगों को देखा ही नहीं था। उन्हें इनकी व्यावहारिक विशिष्टताओं की भी कोई जानकारी नहीं थी।

स्रोत और पत्रकारिता की चर्चा के क्रम में पश्चिमी मीडिया का एक पक्ष -

दरसअल, इराक युद्ध के दौरान युद्ध कवर करने गए पश्चिमी देशों के पत्रकार अमेरिकी सेना के साथ सम्बद्ध हो गए और अमेरिकी सैनिक सूत्रों से मिली सूचनाओं के आधार पर ही वे समाचार भेजते थे। इस तरह के पत्रकार युद्ध की वस्तुपरक और संतुलित रिपोर्टिंग नहीं कर पाए क्योंकि उनका एकमात्र स्रोत अमेरिकी सेना थी और उनका इस्तेमाल काफी हद तक सैनिक प्रोपेगेंडा के लिए किया गया।

इस तरह के अनेक उदाहरण है। अभ्यास को नए कलेवर में पेश करना, पुस्तक की अन्य उल्लेखनीय विशेषता है। शीर्षक दिए गए हैं, 'पाठ से संवाद'। कार्टून, बाक्स, मनमोहक छपाई पुस्तक की काबिले तारीफ विशेषताएं हैं।

पर पुस्तक की कुछ सीमाएं भी गौरतलब हैं। जैसे 'कैसे बनती है कविता' पाठ में कविता और गद्य के आधारभूत अंतर को नहीं बताया गया है। जबकि कविता की शुरूआत करने वाले विद्यार्थियों के लिए यह जानकारी अपरिहार्य है। 'कैसे लिखें कहानी' पाठ में कथानक और कथावस्तु के अंतर को रेखांकित नहीं किया गया है। पाठ में 'अस्पताल का कथानक' पदबन्ध का प्रयोग है, जबकि कथानक का प्रयोग पात्रों के संदर्भ में होता है, यहां अस्पताल की कथावस्तु का प्रयोग होना चाहिए। कैसे करें कहानी का नाट्य रूपांतरण' पाठ में कथानक और कथावस्तु को समानार्थी मान लिया गया है। विधाओं के अलग-अलग स्वरूप की चर्चा करते हुए लिखा गया है, 'क्या विधा बदलने से काव्य-प्रभाव और आस्वाद में भी बदलाव आता है ?' (पृष्ठ 140)। यहां 'काव्य प्रभाव' की जगह 'रचना प्रभाव' शब्द होना चाहिए। भाषायी अशुद्धि के प्रसंग भी हैं। जैसे पृष्ठ 48 का वाक्य 'शायद आप थोड़ा सोच में पड़ जाएं'। यहां 'थोड़ी सोच में पड़ जाएं' होना चाहिए। पर ऐसी सीमाएं काफी कम हैं। उम्मीद है, आगे के संस्करणों में इन पर ध्यान दिया जाएगा।

समग्रतः एनसीईआरटी की यह नई पहल शिक्षा जगत की विलक्षण उपलब्धि है। अच्छी पाठ्यपुस्तक की यह वह श्रेष्ठ नजीर है, जिसमें शिक्षा के बदलते संदर्भ, सरोकार और संवाद की ललक है। यह पुस्तक विद्यार्थी अध्यापक/अध्यापिका संसार के अतिरिक्त भी पठनीय है।

पुस्तक का नाम - 'अभिव्यक्ति और माध्यम'

प्रकाशक - राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, दिल्ली

समन्वयक - संध्या सिंह, रीडर, भाषा विभाग, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, दिल्ली ◆